रामानुज द्वारा शंकर के मायावाद का खण्डन

Ramanuja's Refutation of Shankara's Mayavada

आचार्य शंकर ने जगत् के मिथ्यात्व की सिद्धि के लिए माया सिद्धांत का प्रतिपादन किया है। उनके मत में जगत की सत्ता अज्ञान के कारण सत्य या नित्य मालूम पड़ती है। वह पदार्थ, जो जगत् का उपादान कारण है और जिसके कारण अद्वैतीय ब्रह्म पर नानात्व आरोपित कर जगत् की उत्पत्ति की जाती है, माया कहलाती है। माया भाव-रूप एवं अनिर्वचनीय है। इसके कारण ही हमें ब्रह्म में जगत् की प्रतीति या भ्रम होता है। माया अनादि है परन्तु इसका अन्त संभव है। ब्रह्म ज्ञान माया का निवर्तक ज्ञान है। माया नामधेय मात्र है। नामरूप के नाश के साथ ही इसका भी अन्त हो जाता है।

लेकिन रामानुज ने माया के उपर्युक्त सिद्धांत को मिथ्यावाद कहा है। इन्होंने इसका सशक्त खण्डन किया है। मायावाद के खण्डन के लिए रामानुज ने कुछ तर्क प्रस्तुत किये हैं जिन्हें 'अनुपपत्ति' कहते हैं। उनके द्वारा प्रस्तुत अनुपपत्तियाँ संख्या में सात हैं जो 'सप्तविध अनुपपत्ति' के नाम से प्रसिद्ध हैं। अतः संक्षेप में हम इन अनुपपत्तियों का वर्णन निम्नवत् रूप से कर सकते हैं :—

(1). आश्रयानुपपत्ति :→ रामानुज का पहला तर्क यह है कि अविद्या अथवा भावरूप अनिर्वाच्य माया का आश्रय स्थान कहाँ है? यदि यह कहा जाए कि अविद्या का आश्रय ब्रह्म है तब शंकर का अद्वैतवाद खण्डित हो जाता है, क्योंकि ब्रह्म के अतिरिक्त माया का अस्तित्व मानना पड़ता है। फिर यदि यह कहा जाए कि अविद्या का निवास जीव में है तो भी अमान्य होगा, क्योंकि जीव स्वयं अविद्या का कार्य है। और कारण ही वह कार्य पर कैसे आश्रित रह सकता है। इस प्रकार अविद्या का आश्रय कोई नहीं कहा जा सकता है। इस तर्क को 'आश्रयानुपपत्ति' कहते हैं क्योंकि यह माया के आश्रय से

संबंधित है। रामानुज ने इस तर्क के द्वारा यह बतलाने का प्रयास किया है कि माया का कोई आश्रय नहीं है।

(2). तिरोधानुपपत्ति :→ माया को अविद्या कहते हैं और अविद्या ज्ञान का नष्ट हो जाना है। परन्तु शुद्ध ज्ञान नष्ट नहीं होता है। उसकी सत्ता अनन्त है। शुद्ध ज्ञान या परम ज्ञान मानसिक वृत्ति या विकल्प नहीं है। उसका उद्भव नहीं होता। इसलिए इसका विनाश भी संभव नहीं है। शुद्ध ज्ञान स्वयं प्रकाश है अतः उसका तिरोधान नहीं हो सकता। ज्ञान का तिरोधान करना ही माया का कार्य है, परन्तु हम देख चुके हैं कि ज्ञान का तिरोधान असंभव है, इसलिए माया असिद्ध है।

(3). स्वरूपानुपपत्ति :→ रामानुज कहते हैं कि अविद्या का स्वरूप क्या है? अविद्या को भावात्मक नहीं कहा जा सकता क्योंकि यदि वह भावात्मक है तो फिर उसे अविद्या कैसे कहा जा सकता है। अविद्या को निषेधात्मक भी नहीं कहा जा सकता क्योंकि यदि वह निषेधात्मक है तब वह संपूर्ण जगत को ब्रह्म पर आरोपित कैसे कर देती है? यदि अविद्या भावात्मक है तब इसका अंत नहीं हो सकता। इस तर्क को 'स्वरूपानुपपत्ति' कहा गया है क्योंकि यह माया (अविद्या) के स्वरूप के विषय में है। रामानुज कहते हैं कि क्या माया (अविद्या) स्वरूपतः ब्रह्म के द्वारा प्रकट की जा सकती है? यदि इसे सही मान लिया जाए तो वह नित्य हो जायेगी क्योंकि ब्रह्म नित्य है। इसके अतिरिक्त जीव निरन्तर अविद्या का दर्शन करता रहेगा जिसका फल यह होगा कि वह कभी भी मुक्त नहीं हो सकेगा। अतः यह मान लेने पर कि माया ब्रह्म के द्वारा अभिव्यक्त होती है, मुक्ति असम्भव हो जायेगी।

(4). अनिर्वचनीयानुपपत्ति :→ शंकर के अनुसार माया अनिर्वचनीय है। यह परिभाष्य नहीं है। रामानुज का कहना है कि सभी पदार्थ या तो सत् होते हैं या असत्। जो इनसे परे हैं उसका ज्ञान नहीं होता। इन दो कोटियों के अतिरिक्त अनिर्वचनीय की अनुभूति या ज्ञान संभव नहीं है। क्योंकि जिसका हमें ज्ञान नहीं होता, उसकी सत्ता है; यह कहना उचित नहीं है।

(5). प्रमाणानुपपत्ति :→ माया या अविद्या का ज्ञान कैसे प्राप्त हो सकता है? इसका प्रमाण क्या है? प्रत्यक्ष द्वारा माया का ज्ञान नहीं हो सकता; क्योंकि यह न तो वास्तविक है और न अवास्तविक ही। अनुमान द्वारा भी माया का ज्ञान नहीं मिल सकता; क्योंकि अनुमान के लिए प्रत्यक्ष ज्ञान का होना अनिवार्य है। इसके अतिरिक्त, अनुमान के लिए व्याप्ति और साध्यम का होना आवश्यक है। रामानुज का कहना है कि 'माया' का ज्ञान प्रत्यक्ष, अनुमान, शब्द आदि किसी भी साधन द्वारा नहीं प्राप्त किया जा सकता है।

(6). निवृत्यानुपपत्ति :→ अद्वैत वेदान्त के अनुसार अविद्या-निवृत्ति के लिए निर्गुण, निर्विशेष, अद्वैत ज्ञान आवश्यक है। परन्तु रामानुज के मत में निर्विशेष ज्ञान असंभव है। उनके अनुसार सभी प्रकार के ज्ञान साविशेष होते हैं। इसलिए अविद्या का कोई निवर्तक ज्ञान नहीं है। परिणामस्वरूप अविद्या कभी नष्ट नहीं होगी।

(7). निवर्तकानुपपत्ति :→ ब्रह्म और आत्मा की आत्यंतिक एकता का ज्ञान अथवा 'अद्वैत ज्ञान' निवर्तक ज्ञान कहलाता है। यह एक उच्चतम मानसिक वृत्ति है। किसी निवर्तक के अभाव में अविद्या की निवृत्ति संभव प्रतीत नहीं होती। यहाँ पर रामानुज कहते हैं कि निवर्तक ज्ञान भी अविद्या के अन्तर्गत होगा, क्योंकि ब्रह्म के अतिरिक्त सब कुछ अविद्या है। इसलिए यह मानना होगा कि अविद्या का निवारण अविद्या द्वारा ही होता है। परन्तु ऐसा करना असंभव है। अर्थात् इसकी पूर्ण निवृत्ति संभव नहीं है।

इस प्रकार से अद्वैत-दर्शन में स्वीकृत अविद्या (माया) के विरुद्ध रामानुज द्वारा प्रस्तुत अनुपपत्तियों का यदि विश्लेषण किया जाए तो ज्ञात होगा कि रामानुज अविद्या को ज्ञान-सापेक्ष, ब्रह्म कि विरोधी सत्ता एवं असत् जगत् को सत् जगत् के रूप में ग्रहण करना ही समझते हैं। उपर्युक्त तीनों अर्थों में अविद्या (माया) सचमुच अद्वैत दर्शन में सामंजस्य नहीं रखती। इस प्रकार अविद्या की निवृत्ति से ब्रह्म ज्ञान सिद्ध नहीं किया जा सकता। ब्रह्म ज्ञान के लिए तो ईश्वर की भक्ति-परक उपासना ही एकमात्र साधन है, क्योंकि ब्रह्मसाक्षात्कार ब्रह्म-समर्पित मानस द्वारा ही किया जा सकता है।